(2013) 4 एस.सी.आर.767

निरंजन हेमचन्द्र सशित्तल और अन्य

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

(रिट याचिका (आपराधिक) संख्या 50/2012)

मार्च 15, 2013

(के.एस.राधाकृष्णन और दीपक मिश्रा, जे.जे.)

भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 32-के तहत शक्तियां-कार्यक्षेत्र - अभियुक्त जो कि एक लोकसेवक है, अभियुक्त ने आय से अधिक सम्पत्ति का अर्जन किया अभियुक्त के विरूद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत मुकदमा-विलंब के आधार पर मुकदमा खारिज करने की प्रार्थना-अभिनिर्धारितः कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। किसी भी आपराधिक प्रकरण का निस्तारण प्रकरण में होने वाले विलंब के आधार पर तय नहीं किया जाना चाहिए। विलंब को तथ्यात्मक आधार पर आकलन किया जाना चाहिए, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि अपराध की प्रकृति क्या है तथा सामाजिक न्याय की अवधारणा और सामाजिक न्याय की पुकार को ध्यान में रखते हुए होने वाले विलंब को तथ्यात्मक आधार

पर तौला जाना चाहिए। अपराध की गंभीरता को रिश्वत की राशि मात्रा के आधार पर तय नहीं किया जाना चाहिए। लाभ के बदले में लाभ के लिए अधिकारिक पद का दुरूपयोग करना सामूहिकता के खिलाफ एक अपराध है और लोकतंत्र के मूल सिद्धांत के लिए अभिशाप है। तथ्यों के अनुसार प्रकरण में विलंब आरोपी द्वारा अपनाई गई टालमटोल की रणनीति, अभियोजन पक्ष की और से धीमी गति और सिस्टम के दोष जैसे अदालत को खाली रखने के कारण हुई है। अभियुक्त के द्वारा मुकदमें में देरी की दलील दी गई है और उसे इसलिए भारी कठिनाई और पीडा होना बताया है और इसके कारण आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने का निवेदन किया। अभियुक्त के उपर 35.44 लाख रूपये अपने आय के अधिक ज्ञात स्त्रोतों से अर्जित करने का आरोप है। अभियोजन कार्यवाही शुरू करते समय उक्त अर्जित राशि का मूल्य ध्यान में रखा जाना चाहिए। अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही जारी रखने के लिए संतुलन अभियुक्त पक्ष की ओर दिखता है और संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत कार्यवाही रद्द करने के लिए इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता - भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 13 (2) सपठित 13 (1) (ई)।

भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो ने एक प्रथम सूचना रिपोर्ट एक लोकसेवक के विरूद्ध दर्ज की तत्पश्चात् एफआईआर में लोकसेवक के विरूद्ध एवं दो वृद्ध महिलाओं के विरूद्ध आरोप पत्र विशेष न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया

गया। लोकसेवक के विरूद्ध आरोप पत्र में लोक सेवक को आरोप अन्तर्गत धारा 13 (2) सपठित 13 (1) (ई) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के तहत आरोपित किया गया था। महिलाओं के विरूद्ध मुख्य अपराध में आरोपी को दुष्प्रेरित के आरोप के तहत आरोपित किया गया था। जैसा कि अनुसंधान में विलंब होने के कारण आरोप पत्र को प्रस्तुत किये जाने में की गई देरी एवं विविध प्रार्थना पत्र के निस्तारण में हुई देरी के कारण आपराधिक कार्यवाही हो अपास्त करने के लिए उच्च न्यायालय का रूख किया गया। उच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप करने से इन्कार किया और इसलिए अन्य सभी अभियुक्तों के द्वारा इस न्यायालय में अपील प्रस्तुत की गयी। अपील में उच्च न्यायालय के द्वारा वृद्ध महिलाओं की अपील को स्वीकार करते हुए महिलाआंे के विरूद्ध आरोप से महिलाओं को मुक्त करते हुये उनके विरूद्ध विचाराधीन आपराधिक कार्यवाही को खारिज कर दिया लेकिन परिवादी लोकसेवक एवं उसकी पत्नी के द्वारा प्रस्तुत की गई अपील खारिज कर दी गई।

लोकसेवक एवं उसकी पत्नी द्वारा प्रस्तुत हस्तगत याचिका में यह दावा किया गया कि अनुच्छेद 32 के तहत एक लोकसेवक और उसकी धर्मपत्नी से संबंधित याचिका को न्यायालय ने पहले की आपराधिक अपील को निस्तारित आरोप लगने के सात वर्षों बाद निस्तारित किया है। यह कि अभियुक्त के विरूद्ध आरोप आरोपित होने के चार वर्ष बाद अभियोजन के

द्वारा अनुसंधान अधिकारी को न्यायालय में आंशिक रूप से ही परीक्षित करवाया गया है इसके बाद प्रकरण कई अवसरों पर स्थगित कर दिया गया। यह कि विशिष्ट न्यायाधीश के द्व़ारा अंतिम अवसर प्रदान किये जाने के बावजूद भी अनुसंधान अधिकारी न्यायालय के समक्ष प्रतिपरीक्षण हेतु उपस्थित नहीं हुआ है। यह कि अभियोजन साक्षी क्रम-1 की मुख्य परीक्षा आज तक भी पूरी नहीं हुयी है और अन्य कोई साक्षी न्यायालय के समक्ष अभियोजन द्वारा परीक्षण हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह कि परिवादी के द्वारा न्यायालय के समक्ष अभियोजन पक्ष की साक्ष्य को अभियोजन द्वारा साक्षियों को उपस्थित नहीं करवाने के कारण अभियोजन साक्ष्य का अवसर समाप्त करने हेतु विशिष्ट न्यायाधीश को निवेदन किये जाने पर भी विशिष्ट न्यायाधीश के द्वारा अभियोजन साक्ष्य को समाप्त नहीं किया गया है। यह कि इस न्यायालय के द्वारा पूर्व में सुनाये गये निर्णय को दस वर्ष से अधिक का समय हो चुका है अतएव सम्पूर्ण कार्यवाही निरस्त किये जाने योग्य है।

याचिकाकर्ता की शिकायत की गंभीरता आपराधिक विचारण में हो रहे विलंब से संबंधित है। यह कि याचिकाकर्ता की सामाजिक प्रतिष्ठा एवं सम्मानजनक आजीविका उस आदेश के माध्यम से प्रभावित हो रही है जिसके तहत याचिका संख्या 1 के खिलाफ निलंबन आदेश पास किया गया था। यह कि निलंबन अवधि के दौरान याची को अल्पनिर्वाह भत्ता प्राप्त हो

रहा था और उस अवधि के दौरान वह एक सेवा की एक निश्चित आयु तक पहूंच गया था जहां उसे बिना पदोन्नति के सेवानिवृत होने के कारण भावनात्मक और मानसिक तनाव की अत्यधिक पीडा और दबाव झेलना पडा। शीघ्र विचारण नहीं होने के कारण अनुच्छेद 21 के तहत याची को प्राप्त मौलिक अधिकार प्रभावित हुये।

इस प्रकार इस याचिका के जरिये यह प्रश्न विचारणीय होता है कि क्या यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 32 में इस न्यायालय को निहित शक्तियों के आधार पर आपराधिक विचारण में विलंब के आधार पर आपराधिक कार्यवाही को निरस्त किया जाना चाहिए।

रिट याचिका को निस्तारित करते हुए न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है-

1.1 यह कि एक ओर त्वरित सुनवाई का अभियुक्त को अधिकार है एवं दूसरी ओर प्रकरण को रद्द करने या दोषमुक्त करने या प्रकरण की पुनः सुनवाई के लिए भेजने से इनकार करने का अधिकार इस न्यायालय के पास है। इसके अतिरिक्त समाज पर अपराध पर प्रभाव और न्यायिक प्रणाली में लोगो के विश्वास के संबंध में होने का संबंध है। इस प्रकार के मामलों में कोई यांत्रिक दृष्टिकोण नहीं हो सकता एवं आपराधिक विचारण को तय करने के लिए कोई निश्चित समय सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। आपराधिक विचारण में विलंब को तथ्यात्मक रूप से देखा

जाना चाहिए। अपराध की प्रकृति, सामाजिक न्याय की अवधारणा और सामूहिकता की पूकार को ध्यान में रखना चाहिए। हस्तगत प्रकरण में अभियुक्त के विरूद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के तहत आय से अधिक सम्पत्ति अर्जित करने के अपराध में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया था। इस अधिनियम का उद्देश्य सेवा करना है संसद के द्वारा भ्रष्टाचार को मिटाना और भ्रष्टाचार के आपराधिक अपराधी को दोषी साबित होने पर कठोर सजा प्रदान करने के उद्देश्य से इस अधिनियम का निर्माण किया गया था। इस अधिनियम को बनाने के विधायिका का उद्देश्य सामाजिक प्रासंगिकता है। वर्तमान परिदृश्य में भ्रष्टाचार का निवारण अर्थव्यवस्था की नींव को मजबूत करने की क्षमता के रूप में देखा गया है। कई प्रकार के प्रकरणों में राशि बहुत कम होती है और कई प्रकरणों में राशि बहुत ज्यादा होती है।

इस प्रकार के प्रकरणों में अपराध की गंभीरता का आंकलन रिश्वत की राशि की मात्रा के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए। किसी लाभ के बदले लाभ देने के लिए अधिकारिक रूप से लोकसेवक के पद का दुरूपयोग करने का कार्य सामूहिकता के खिलाफ अपराध है और लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों के लिए अभिशाप है, क्योंकि इस प्रकार का अपराध आमजन के विश्वास को कानून के प्रति कमजोर करता है और इस प्रकार का अपराध कानून के शासन में एक विसंगति पैदा करता है। सुशासन के व्यवस्था लोक संस्थाओं

पर जनता के विश्वास पर आधारित होता है। भ्रष्टाचार के मामलों में प्रासंगिक सबुतों की जांच किये बिना केवल आपराधिक प्रकरण के विचारण में हुए विलंब के आधार पर प्रकरण की कार्यवाही को निरस्त किया जाकर भ्रष्टाचार को जारी रखने की अनुमति दी जाती है तो एक समय ऐसा आ सकता है जब भ्रष्टाचारी व्यक्ति अराजकता का मार्ग प्रशस्त करने की प्रवृति को बढावा देंगे। (पैरा-19) (785-ए-जी)

1.2 बिना किसी विरोधाभास के डर के यह कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार को डीग्री से नहीं हांका जाना चाहिए क्योंकि भ्रष्टाचार अव्यवस्था की जननी है, प्रगति के लिए सामाजिक ईच्छा को भ्रष्टाचार खत्म कर देता है, अवांछित महत्वकांक्षाओ को उत्पन्न करता है, विवेक को समाप्त कर देता है इसके अतिरिक्त किसी भी लोक संस्थान की महिमा को भी नष्ट कर देता है तथा आर्थिक संरचना को कमजोर बना देता है। भ्रष्टाचार किसी भी देश की सभ्यता की भावना को क्षत विक्षत कर देता है और वहां के शासन व्यवस्था को नष्ट कर देता है। अनैतिक रूप से अर्जित की गयी धन सम्पत्ति ईमानदारी में विश्वास करने वाले लोगों की उर्जा को नष्ट कर देती है, इतिहास पीड़ा के साथ दर्ज करता है कि अनैतिक धन सम्पत्ति से अर्जित आय से लोगों को कैसे कैसे कष्ट सहने पड़ते है, एकमात्र राहत देने वाला तथ्य यह है कि क्या इस प्रकार के मामलों में सामूहिक संवेदनशीलता इस तरह की पीड़ा का सम्मान करती है, क्या यह संवैधानिक

नैतिकता के अनुरूप है, इसलिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के तहत कार्यवाही रद्द करने के लिए उपरोक्त पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए। (पैरा-20) (785-एच, 786-ए-सी)

1.3 यह कि ऐसा प्रतीत होता है जो विंलब हुआ है वो अभियुक्त के द्वारा प्रयोग में ली गई टालने की रणनीति के तहत हुआ है, अभियोजन के द्वारा ढीले रवैये और सिस्टम की कमियों के कारण जैसे न्यायालय को खाली रखा जाना, जबकि विचारण न्यायालय के समक्ष किसी भी प्रकार का स्थगन आदेश प्रकरण में नहीं था फिर भी आरोपी के कहने पर स्थगन दिया गया। उच्च न्यायालय के द्वारा स्थिति स्पष्ट करने के पश्चात् अभियुक्त के द्वारा अंतर्निहित प्रवृत्ति के द्वारा स्थगन पाया गया और प्रकरण में विविध प्रार्थना पत्रों को प्रकरण के विचारण के दौरान प्रस्तुत कर विचारण लंबा खींचने का प्रयास किया गया। यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्त कानून में निहित अधिकारों की माध्यम से प्रार्थना पत्र प्रस्तुत नहीं कर सकता परंतु प्रकरण का विचारण अभियुक्त के द्वारा प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर विलंबित हुआ है, तो अभियुक्त के द्वारा इस बात के लिए अपनी समर्थन में यह आधार नहीं ले सकता कि प्रकरण में विलंब के आधार पर उसे राहत प्रदान करते हुए प्रकरण की कार्यवाही को खत्म करने के संबंध में रियायत की अपेक्षा करे। वर्तमान मामले में अभियुक्त पर आरोप है कि अभियुक्त के द्वारा 33.44 लाख रूपये की सम्पत्ति अर्जित की गई।

अभियोजन कार्यवाही शुरू करते समय उक्त राशि की के मूल्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अधिकारिक पद का दुरूपयोग करने की प्रकृति एक महामारी की तरह फैल गई है और इस प्रकृति ने सामूहिक रूप से यह विश्वास दिला दिया है कि जब तक रिश्वत नहीं दी जायेगी, काम नही होगा। कुछ लोग इसका विरोध करते है परंतु यह विरोध दूसरों को साहस की और साहस के पवित्रता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता है। कुछ लोग इसे भटकाने की कोशिश करते है। यह प्रचलन सामाजिक एवं राष्ट्रीय हित के विरूद है। इस प्रकार से आरोपी के खिलाफ कार्यवाही जारी रखने का संतुलन अभियोजन पक्ष के पक्ष में झुकता है और इसलिए यह न्यायालय प्रकरण की कार्यवाही को रद्द करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए ईच्छुक नहीं हैं। हालांकि, विशेष न्यायाधीश को दिसम्बर 2013 के अंत तक विचारण के निपटान करने का निर्देश दिया जाता है। (पैरा-21) (786-डी-एच, 787-ए-सी)

राजदेव शर्मा बनाम विहार राज्य (1998) 7 एस.सी.सी. 507 1998 (2) पूरक एस.सी.आर. 130 य अब्दुल रहमान अंतुले और अन्य बनाम आर.एस.नायक और अन्य (1992) 1 एस.सी.सी. 225 य 1991 (3) पूरक एस सी आर 325 य करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य (1984) 3 एस.सी.सी. 569 य 1994 (2) एस.सी.आर 375 य ख्सामान्य कारण,, एक

पंजीकृत संस्था द्वरा इसके निदेशक बनाम भारत संघ और अन्य (1996) 4 एस.सी.सी. 33 य 1996 (2) पूरक एस.सी.आर. 196 य ख्सामान्य कारण, एक पंजीकृत संस्था द्वारा इसके निदेशक बनाम भारत संघ और अन्य (19960) 6 एस.सी.सी. 775ः 1996 (9) पूरक एस.सी.आर. 296 य राज देव शर्मा (प्प्) बनाम बिहार राज्य (1996) 7 एस.सी.सी. 604ः 1999 (3) पूरक एस.सी.आर. 124 य पी.रामचंद्र राव बनाम कर्नाटक राज्य (2002) 4 एस.सी.सी. 355ः 2009 (1) एस.सी.आर. 517 य सुदर्शन आचार्य बनाम पुरोशोत्तम आचार्य और अन्य (2012) 9 एस.सी.सी. 241 य मोहम्मद हुसैन उर्फ जुल्फिकार अली बनाम राज्य (एन सी टी दिल्ली सरकार) (2012) 9 एस.सी.सी 408 य जाहिर हबीबुल्ला एच.शेख और अन्य बनाम गुजरात राज्य और अन्य (2004) 4 एस.सी.सी. 158ः 2004 (3) एस.सी.आर. 1050 और सत्यजित बनर्जी और अन्य बनाम वेस्ट बंगाल राज्य और अन्य (2005) 1 एस.सी.सी. 115ः 2004 (6) पूरक एस.सी.आर. 294 द्द संदर्भित किया.

कानून सन्दभर्ः

1998 (2) पूरक एस.सी.आर. 130 संदर्भित पैरा 3, 15

1991 (3) पूरक एस.सी.आर. 325 संदर्भित पैरा 12, 16

1994 (2) एस.सी.आर. 375 संदर्भित पैरा 14, 15

1996 (2) पूरक एस.सी.आर. 196 संदर्भित पैरा 15

1996 (9) पूरक एस.सी.आर. 296 संदर्भित पैरा 15

1999 (3) पूरक एस.सी.आर. 124 संदर्भित पैरा 15

(2002) 4 एस.सी.सी. 578 संदर्भित पैरा 15, 16 य 17

2009 (1) एस.सी.आर. 517 संदर्भित पैरा 17

(2012) 9 एस.सी.सी. 241 संदर्भित पैरा 17

(2012) 9 एस.सी.सी 408 संदर्भित पैरा 18

(2004) (30 9 एस.सी.आर. 1050 संदर्भित पैरा 18

2004 (6) पूरक एस.सी.आर.294 एस.सी.सी.241 संदर्भित पैरा चंतं 18

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार रिट याचिका (आपराधिक) संख्या 50 ध्2012

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत

डॉ. राजीव धवन, ब्रज किशोर मिश्रा, विजय कुमार, अपर्णा झा, अभिषेक यादव, आदित्य एस., याचिकाकर्ता की ओर से.

संजय वी.खर्डे, आशा गोपालन नैयर, प्रतिवादी की ओर से.

न्याययाल का निर्णय इनके द्वारा सुनाया गया-

दीपक मिश्रा जे.

1. भारत की संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर इस याचिका के याचिकाकर्ता की शिकायत मुकदमें में विलंब याचिकाकर्ता की सामाजिक प्रतिष्ठा का धीरे धीरे क्षरण, निलंबन आदेश के कारण सम्मानजनक आजीविका से वंचित होना है। याचिकाकर्ता संख्या 1 जिसे निलंबन के दौरान अल्पनिर्वाह भत्ता मिल रहा था और पदोन्नति के लिए विचार किये बिना ही सेवानिवृति की आयु तक पहूंच गया। भावनात्मक और मानसिक तनाव से आरोपी अत्यधिक पीडित था जिसे त्वरित सुनवाई इनकार कर दिया गया था। इस कारण संविधान में निहित उसके मौलिक अधिकारों को कमजोर कर दिया गया था। संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत आरोपी के विरूद्ध विचाराधीन प्रकरण में हो रहे विलंब से संबंधित दावें याचिका में संवैधानिक पृष्ठभूमि में किये गये है जिसके परिणामस्वरूप ग्रेटर मुम्बई के विशेष न्यायाधीश की अदालत में विचाराधीन विशिष्ठ प्रकरण 4 ध् 93 में की कार्यवाही को रद्द करने की प्रार्थना की गई है।

2. मामले के संबंध में आगे बढने से पहले यह उल्लेख करना आवश्यक है कि यह पहली बार नहीं है जब याचिकाकर्ताओं ने न्यायालय का दरवाजा खटखटाया हैं, याचिकाकर्ताओं के द्वारा अन्य के साथ मिलकर बोम्बे उच्च न्यायालय द्वारा अस्वीकार किये गये याचिका रद्द करने बाबत्

विचारण में विलंब के आधार पर आपराधिक कार्यवाही को अपास्त करने बाबत् तीन विविध याचिकाएं जो तीन आपराधिक अपील में परिवर्तित हुई थी, आपराधिक अपील संख्या 176 ध् 2001, 177 ध् 2001, 178 ध् 2001। न्यायालय के द्वारा उक्त अपीलों में यह पाया गया था कि याचिका में अपीलकर्ताओं के द्वारा विचारण में देरी के आधार पर आपराधिक अभियोजन को रद्द करने का कोई विधिक आधार के अधीन औचित्य नहीं था। हालांकि, इस न्यायालय के द्वारा दो वृद्ध महिलाओं के खिलाफ आरोपों की संबंध में ध्यान दिया गया जिनके विरूद्ध अपराध को अंजाम देने के लिए दुष्प्रेरित करने का मामला दर्ज किया गया था। जिस संबंध में न्यायालय द्वारा यह राय दी गई कि दोनों वृद्ध महिलाओं के विरूद्ध आरोप पत्र में जानबुझकर अपराध के लिए दुष्प्रेरित करने के संबंध में सामग्री अपर्याप्त है कि दोनों वृद्ध महिलाओं ने लोकसेवक को सम्पत्ति अर्जित करने के लिए दुष्प्रेरित किया हो जो लोकसेवक की आय के ज्ञात स्त्रोतों से अधिक थी। इसके अलावा उन्हें मजबूर करना, उन दोनों वृद्ध महिलाओं को आपराधिक विचारण के लिए मजबूर करना अनुचित होगा, उनकी वृद्ध अवस्था को देखते हुए उनके खिलाफ अंतिम दोषसिद्धि की कोई उचित संभावना नहीं होने पर लंबे मुकदमें में खडे रहने के लिए, और तदानुसार उन दो आधारों पर दोनों वृद्ध महिलाओं के द्वारा की गई अपीलों को स्वीकार कर लिया गया और उनके विरूद्ध आपराधिक अभियोजन को रद्द कर दिया गया। प्रकरण में आरोपी लोकसेवक और उसकी पत्नी द्वारा की गई अन्य

अपील को खारिज कर दिया गया।

3. विदित हो उक्त निर्णय में दोनों महिलाओं के खिलाफ कार्यवाही को रद्द करते हुए, इस न्यायालय ने राजदेव शर्मा बनाम बिहार राज्य (1) में निर्णय का उल्लेख किया और पाया कि मुकदमा एक यो दो वर्ष के भीतर पूर्ण होने के संभावना नहीं थी। इसके अलावा न्यायालय ने विशेष न्यायालय को गंभीरतापूर्वक राजदेव शर्मा के प्रकरण में इस न्यायालयय द्वारा दिये गये निर्देशों की सख्ती से पालना करने हेतु निर्देशित किया गया।

4. तथ्य यह है कि भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो ने प्राम्भिक जांच के पश्चात् इस अपील के याचिकाकर्ता संख्या 1 के खिलाफ 26.06.1986 को एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की, याचिकाकर्ता महाराष्ट्र सरकार के निषेध और उत्पाद शुल्क विभाग में डिप्टी कमिश्नर के पद पर कार्यरत था, उनके विरूद्ध भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5 (2) के तहत प्रकरण पंजीबद्ध किया गया। प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के पश्चात् विभिन्न स्थानो पर छापेमारी की कार्यवाही आयोजित की गई और अंततः यह पाया गया कि याचिकाकर्ता, जो कि एक लोकसेवक था, उसके द्वारा अपने सेवाकाल के दौरान जो सम्पत्ति अर्जित की थी, जिसकी कीमत 33.44 लाख रूपये थी, जो उनकी सेवा से प्राप्त आय के ज्ञात स्त्रोतो से अधिक थी। जांच के बाद महाराष्ट्र

सरकार को याचिकाकर्ता के विरूद्ध अभियोजन चलाने के लिये मंजूरी देने के लिये आवेदन किया गया था, जिसकी अनुपालना में 22.01.1993 को मंजूरी प्राप्त हुई, उसके पश्चात् विशेष न्यायालय के समक्ष 04.03.1993 को दो वृद्ध महिलाओं के साथ याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया था। याचिकाकर्ता लोकसेवक के खिलाफ कथित अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (1) (ई) सपठित धारा 13 (2) के तहत था। महिलाओ के खिलाफ आरोप पत्र में मुख्य आरोप अपराध के लिये दुष्प्रेरित करने का था। चूंकि अनुंसधान करने, आरोप पत्र दाखिल करने और अंतरित स्तर पर कुछ अंर्तवर्ती आवेदनो के निस्तारण में देरी हुई थी, इसलिये आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिये 15.04.1997 को बॉम्बे उच्च न्यायालय का रूख किया गया था। जैसा कि पहले स्पष्ट किया गया है, उच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया और इसीलिये सभी आरोपी व्यक्तियों ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, जिसमें वृद्ध महिलाओ के संबंध में आपराधिक मामले को रद्द कर दिया गया।

5. इस याचिका में याचिकाकर्ता की ओर से दावा किया गया है कि इस न्यायालय द्वारा पूर्व में पेश की गई आपराधिक अपीलो का निस्तारण करने के बाद लगभग 7 वर्षों की अवधि गुजर जाने के बाद आपराधिक विचारण में दिनांक 15.12.2007 को अभियुक्त के विरूद्ध आरोप न्यायालय द्वारा तय किये गये थे। यह जाहिर किया गया है कि प्रकरण के

विचारण के लंबित रहने के दौरान याचिकाकर्ता नं. 1 की पत्नी ने 23.05.2008 को अंतिम सांस ली है। आरोप तय होने के लगभग 4 साल बाद 01.02.2011 को प्रकरण के जांच अधिकारी श्री वसंत एस. शेटे को अभियोजन पक्ष द्वारा आंशिक रूप से न्यायालय के समक्ष परिक्षित करवाया गया है और इसके पश्चात् कई अवसर पर मामले को स्थगित कर दिया गया है। विशेष न्यायाधीश के द्वारा अंतिम अवसर दिये जाने के बावजूद भी अनुसंधान अधिकारी को परिक्षित करवाने के लिये प्रस्तुत नहीं किया गया है। जैसा कि अनुरोध किया गया था, अनुसंधान अधिकारी 20.07.2011 को विशिष्ट न्यायाधीश के समक्ष न्यायालय के समक्ष परिक्षित करवाने के लिये उपस्थित हुए और अपने को परिक्षित कराने की बजाय न्यायालय से अतिरिक्त समय मांगा गया। इसके बाद मामला 25.08.2011, 21.09.2011 और 18.10.2011 को स्थगित कर दिया गया। इसलिये अनुसंधान अधिकारी परीक्षित नहीं हो सका। 15.11.2011 को अनुसंधान अधिकारी ने सहायक पुलिस आयुक्त एसीबी को एक पत्र प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया कि वह स्वेच्छिक सेवानिवृत्ति ले चुका है और अपने खराब स्वास्थ्य के कारण अदालत में उपस्थित होने में और मामले के विचारण में प्रस्तुत होने में असमर्थ है। अनुसंधान अधिकारी ने एसीपी से मामले की पैरवी के लिये किसी अन्य अधिकारी को नियुक्त करने का अनुरोध किया। इसके बाद अनुसंधान अधिकारी अपनी गवाही देने के लिये विशेष जज के समक्ष अनुपस्थित हो गया। यह तर्क दिया गया कि उक्त स्थिति के कारण

पी.डबलयू-1 का मुख्य परीक्षण अभी तक पूरा नही हुआ है और अन्य गवाहो को विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षण के लिये प्रस्तुत नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता की ओर से विशिष्ट न्यायालय के समक्ष यह प्रार्थना की गई कि अभियोजन के द्वारा गवाहो को पेश करने में असमर्थता के कारण अभियोजन मामले को बंद कर दिया जाना चाहिये, विशेष न्यायाधीश ने साक्ष्य को बंद नहीं किया। याचिकाकर्ता ने यह आग्रह किया है कि इस न्यायालय के द्वारा पूर्व में फेसले को सुनाये हुए 10 साल से अधिक का समय व्यतीत हो चुका है और इसलिये पूरी कार्यवाही को रद्द किया जाना चाहिये। प्रतिष्ठा का नुकसान, मानसिक पीड़ा, तनाव और संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत निहित त्वरित सुनवाई की अवधारणा के घोर उल्लंघन पर जोर डाला गया है।

6. महाराष्ट्र राज्य की ओर से प्रतिवादी संख्या-1 के द्वारा अपने पक्ष को जाहिर किया है कि पूर्व में पेश की गई अपील में निर्णय दिये जाने के बाद आरोपी ने 29.03.2001 को विभिन्न राहतो की मांग करते हुए अनेक विविध आवेदन दायर किये और प्रार्थना की कि आरोप विरचित किये जाने की प्रक्रिया को स्थगित किया जावे जब तक विविध प्रार्थना पत्रो का निस्तारण न हो जावे। इसके पश्चात् आरोपी अपने निगरानी क्षेत्राधिकार और रिट याचिका क्षेत्राधिकार के तहत उच्च न्यायालय गया। हालांकि, उच्च न्यायालय ने स्थगन नहीं दिया। उस समय आरोपी के स्तर

पर ही प्रकरण स्थगित था। अनेको अवसर पर आरोपी स्वयं के द्वारा प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर स्थगन चाहा है एवं इसके अतिरिक्त देश से बाहर थाईलैण्ड, बैंकोक, सिंगापुर जाने के लिये आरोपी के द्वारा स्थगन चाहा गया।

7. विचारण शुरू होने के पश्चात् भी आरोपी के द्वारा विचारण में सहयोग नहीं किया जाकर असहयोगी के रूप में रहा। एक चार्ट प्रस्तुत किया गया जिसमें दर्शाया गया है कि किस प्रकार से अभियुक्त के द्वारा आरोप के स्तर पर उच्च न्यायालय में प्रकरण लंबित होने का हवाला देकर प्रकरण में स्थगन प्राप्त किये गये। एक संदर्भ के अनुसार दिनांक 30.01.2003 के आदेशानुसार सभी आरोपीगणो को निर्देशित करते हुए निर्देश दिये गये कि सभी आरोपी आगामी तारीख पेशी दिनांक 07.02.2003 को आरोप विरचित करने हेतु न्यायालय में उपस्थित रहेंगे। उक्त संदर्भ में पारित आदेश से यह स्पष्ट है कि आरोपीगण के द्वारा रिट याचिका के आधार पर प्रकरण के विचारण में स्थगन की मांग की गई थी जो याचिकायें उच्च न्यायालय में आरोपीगणों की ओर से लंबित थी। यह भी पटल पर रखा गया है कि आरोपीगण द्वारा कुछ ऐसे प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किये गये थे, जिनमें लंबी तारीख पेशी निजी कारणो के आधार पर और कभी-कभी अधिवक्ता के उपलब्ध नहीं होने के आधार पर चाही गई थी। अभियोजन का यह मामला है कि स्थगनो के कारण आरोप निश्चित अवधि में विरचित नही किये जा सके। दिनांक 15.12.2007 को चार आरोप

विरचित किये गये। वास्तविक तथ्यों में यह भी प्रकट होता है कि कुछ विविध प्रार्थना पत्र आरोपीगण के द्वारा प्रस्तुत किये गये थे, और अंततः 20.02.2008 को उन्हे खारिज कर दिया गया। दिनांक 04.04.2009 को न्यायालय द्वारा एक आदेश पारित किया गया जिसमे अभियुक्त के लिये वकील की आवश्यकता थी, जिनमें धारा 294 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार दस्तावेज स्वीकार्य एवं अस्वीकार्य करवाये जाने थे । कुछ समय इस प्रक्रिया में विचारण के दौरान व्यतीत हो गया। प्रकरण पी.डब्ल्यू-1 के ऑपरेशन के कारण भी स्थगित हुआ था । दिनांक 26.08.2012 को विचारण न्यायालय के द्वारा इस तथ्य को रिकॉर्ड पर लिया गया है कि गवाह शेटीय न्यायालय में उपस्थित होने में असमर्थ है। इसके बाद दिनांक 13.07.2012 को पी.डब्ल्यू-1 ने बताया कि वह मानसिक असंतुलनता की बिमारी से पीड़ित है और साक्ष्य हेतु उपरोक्त परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में असमर्थ है। इस स्थिति को देखते हुए कोर्ट ने आगामी तारीख पेशी पर अभियोजन को प्रकरण के अन्य गवाहान के बयान करवाने हेतु निर्देशित किया। इस तरह से जो दस्तावेज प्रस्तुत किये गये हैं, प्रतिउत्तर शपथ-पत्र के साथ उससे यह साफ जाहिर है कि अभियुक्त के द्वारा सुनियोजित और अन्य प्रकार से स्थगन प्राप्त किये है।

8. प्रतिउत्तर शपथ-पत्र के अनुसार विभिन्न तिथियों का उल्लेख किया गया है और उनकी गणना करते हुए यह कहा गया है कि

अभियुक्त के कारण होने वाले विलंब की अवधि लगभग साढे 15 वर्ष है और विचारण न्यायालय के द्वारा मामले को सुनवाई हेतु सूचीबद्ध करने के संबंध मे देरी एक वर्ष है। इसके अतिरिक्त बाकि अविलम्ब अभियोजन पक्ष के द्वारा विभिन्न अवसरो पर आगामी तारीखे लेने के कारण हुआ है तथा विचारण जज भी कुछ तारीखो पर छुट्टी पर थे। इस पृष्ठभूमि में यह भी तर्क दिया गया कि यह प्रकरण भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत शक्तियों के प्रयोग में कार्यवाही को रद्द करने के बाबत् उपयुक्त नहीं है।

9. एक जवाबी हल्फनामा दायर किया गया है, जिसमें कहा गया है कि रिहाई के लिए आवेदन करना कानूनी अधिकार है और इसलिए रिहाई आवेदन के निस्तारण में हुई देरी के लिए अभियुक्त को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। यह आग्रह किया गया है कि अनेकों आदेश पारित किये गये है परंतु एकमात्र साक्षी को भी परीक्षित नहीं किया गया है। यह आरोप कि अभियुक्त छुट्टियों पर चला गया गंभीर विवादास्पद है। दिनांक 18.03.2005 को उच्च न्यायालय द्वारा यह स्पष्ट किया गया था कि स्थगन नहीं दिये जाने पर और मामले का लंबित होना विचारण में विचारण न्यायालय के समक्ष स्थगन का आधार नहीं हो सकता। यह प्रकट किया गया है कि अनुसंधान अधिकारी विचारण के दौरान ना तो गंभीर रहा, ना ही प्रकरण की प्रगति को देखने में रूची रखता है, क्योंकि उसे पता है, अभियोजन पक्ष का मामला पूरी तरह से गुणावगुण से रहित है। आगे कहा

गया है कि विचारण के हर स्तर पर अस्पष्ट और भारी विलंब हर स्तर पर हुआ है, इसलिए प्रकरण रद्द करने योग्य है।

10. हमारे द्वारा याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. राजीव धवन और अयाची-राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता संजय वी. खरडे को सुना गया।

11. केन्द्रीय मुद्दे की विवेचना करने के लिए, क्या ऐसे मामलें में इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, विलंब के आधार पर आपराधिक मुकदमे को रद्द कर देना चाहिए, इसलिए यह बताना आवश्यक है कि वर्तमान याचिका केवल 02.03.2001 के बाद बिताए गए समय से संबंधित है यानी की पहले की आपराधिक अपीलों में निर्णय की घोषणा की तारीख और इसके अलावा तथ्यात्मक मैटर्ीक्स जैसे की पहले ही उजागर किया गया है यह दर्शाता है कि देरी कैसे हुई। विचारण में देरी के तथ्य और उसके परिणामी प्रभाव का परीक्षण इस न्यायालय द्वारा कानून की व्याख्या के आधार पर किया जाना है।

12. ''अब्दुल रहमान बनाम आर.एस. नायक और अन्य (2) में एक प्रस्ताव दिया गया था कि जब तब आपराधिक कार्यवाही के समापन के लिए समय सीमा तय नहीं की जाती तब तक त्वरित सुनवाई का अधिकार एक भ्रामक होगा। संविधान पीठ ने तथ्यात्मक मैट्िरक्स और

विभिन्न प्रस्तुतियों का उल्लेख करने के बाद राय दी कि अनुच्छेद 21 से निकलने वाली त्वरित सुनवाई की संवैधानिक गांरटी है वो आपराधिक प्रक्रिया संहिता में भी परिलक्षित होती है। इसके बाद न्यायालय ने कहाः-

"83. लेकिन फिर त्वरित सुनवाई या उक्त अवधारणा को व्यक्त करने वाली अन्य अभिव्यक्तियां आवश्यक रूप से प्रकृति में सापेक्ष है। कोई पूछ सकता है, शीघ्र यानी कितना शीघ्र?, कितनी देरी बहुत ज्यादा देरी है?, हमें नहीं लगता कि आपराधिक कार्यवाही के समापन के लिए कोई समय सीमा निर्धारित करना संभव है। अपराध की प्रकृति अभियुक्तों की संख्या, गवाहों की संख्या, विशेष अदालत में कार्यभार, संचार के साधन और कई अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखना आवश्यक है'

इतनी राय व्यक्त करने के बाद न्यायालय ने हत्या के मुकदमें से संबंधित कुछ उदाहरण दिये जहां कम समय में गवाहों का परीक्षण किया गया और कुछ प्रकरण जिनमें बड़ी संख्या में गवाह शामिल होते है। इसमें कुछ ऐसे अपराधों का भी उल्लेख किया गया है जो अपनी प्रकृति के कारण जैसे साजिश के मामलें, गबन के मामले, धोखाधडी, जालसाजी, राजद्रोह, लोकसेवकों द्वारा आय से अधिक सम्पत्ति अर्जित करना, सार्वजनिक अधिकारियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के मामलें, मामलों में अनुसंधान व विचारण में अधिक समय लगता है, न्यायालय ने यह भी नोट किया कि न्यायालय में काम का दबाव जिला, क्षेत्रिय, राज्य स्तरीय बार सदस्यों की

हड़ताले भी कार्य की स्थिति में बाधा डालती है। बैंच ने आगे कहा कि चीजों की प्रकृति में आपराधिक विचारण की एक समय सीमा तय करना मुश्किल है और यदि यह एक छोटा अपराध है और आर्थिक अपराध नहीं है और इसमें देरी होती है तथा जो देरी अभियुक्त द्वारा कारित नही है तो अलग स्थिति हो सकती है परंतु हर प्रकरण की अपनी प्रकृति होती है इसलिए समय सीमा निश्चित नहीं जा सकती।

13. उक्त मामलें में पैरा 86 में न्यायालय में 11 प्रस्तावों को खारिज कर दिया जो दिशानिर्देशों के रूप में काम करने के लिए है। संविधान पीठ ने कहा कि उक्त प्रस्ताव सम्पूर्ण नहीं है, क्योंकि सभी स्थितियों का पूर्वाभास करना मुश्किल है और इसके अलावा कोई कठोर नियम बनाना भी संभव नहीं है। जो प्रस्ताव वर्तमान उद्देश्य के लिए प्रांसगिक है उन्हें नीचे प्रस्तुत किया गया है।

"5. यह निर्धारित करते समय की क्या अनुचित देरी हुई है (जिसके परिणाम स्वरूप त्वरित सुनवाई के अधिकार का उल्लंघन हुआ है) संबंधित परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए जिसमें अपराध की प्रकृति, अभियुक्त और गवाहों की संख्या, संबंधित अदालत का कार्यभार शामिल है। यह सच है कि त्वरित सुनवाई सुनिश्चित करना राज्य का दायित्व है और राज्य में न्यायपालिका भी शामिल है लेकिन ऐसे मामलों में सकारात्मक दृष्टिकोण के बजाय यथार्थवादी और व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाया जाना

चाहिए।

8. अंततः न्यायालय को यह निर्धारित करना पडेगा कि ''संतुलन परीक्षण'' या ''संतुलन प्रक्रिया के प्रासंगिक कारक क्या है और यह निर्धारित करना पडेगा कि मामले की त्वरित सुनवाई के अधिकार की उपेक्षा की गई है।

9. सामान्यतः जहां अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि किसी आरोपी के शीघ्र सुनवाई के अधिकार का उल्लंघन किया गया, चाहे मामले आरोप का हो या दोषसिद्धि का, मामले को रद्द किया जाना चाहिए। परंतु यह एक खुला विषय नहीं है, किसी मामले में अपराध की प्रकृति और अन्य परिस्थितियों ऐसी हो सकती है कि कार्यवाही को रद्द करना न्याय के हित में नहीं हो सकता है। ऐसे मामलें में अदालत ऐसे कोई अन्य उचित आदेश देने के लिए स्वतंत्र है जिसमें मुकदमें का विचारण एक निश्चित समय के भीतर समाप्त करने का आदेश शामिल है जहां विचारण समाप्त नहीं हुआ या जहां विचारण समाप्त हो गया है, वहां सजा कम करने का आदेश शामिल है, जिसे उचित माना जा सकता है और मामले की परिस्थितियों में न्याय संगत है।

इसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपराधों की सुनवाई के लिए कोई समय सीमा तय करना ना तो उचित है और ना ही व्यावहारिक है क्योंकि ऐसा कोई भी नियम योग्य होने के लिए बाध्य है।

14. करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य (3) में एक अन्य संविधान पीठ ने इस सिद्धांत को स्वीकार करते हुए कहा कि अभियुक्त को शीघ्र सुनवाई की अधिकार से वंचित रखने के परिणामस्वरूप अभियोग को खारिज या दोषसिद्धि को बदलने का निर्णय हो सकता है, उसे निम्न प्रकार से इंगित किया गया।

"92. हालांकि, इस सिद्धांत के तहत जांच से गुजरने के लिए कोई भी समय बहुत लंबा नहीं है और न ही मामले के निस्तारण में देरी से आरोपी को वास्तविक पूर्वाग्रह दिखाने के लिए कहा जाता है। दूसरी ओर अदालत को टालने योग्य देरी से संभावित पूर्वाग्रह और नुकसानों को ध्यान में रखते हुए एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाना होगा। यह निर्धारित करना होगा कि क्या किसी आपराधिक कार्यवाही में अभियुक्त को त्वरित सुनवाई के अधिकार से वंचित किया गया है। अनुचित विलंब के साथ मुकदमें की पहचान इन कारकों से की जा सकती है।

1. विलंब की लंबाई।

2. विलंब का औचित्य।

3 अभियुक्त का शीघ्र मुकदमा चलाने का अपने अधिकार का दावा।

4. अभियुक्त के प्रति विलंब के बाबत पूर्वाग्रह।

15. हालांकि, इसके बाद कुछ घोषणाएं अर्थात ''कॉमन कॉज'' एक पंजीकृत सोसायटी जरिये निदेशक बनाम भारत संघ (4), और'' कॉज'' एक पंजीकृत सोसायटी जरिये निदेशक बनाम भारत संघ (5), और अन्य माध्यम से राजदेव शर्मा एवं राजदेव शर्मा (II) बनाम बिहार राज्य (6), आपराधिक मुकदमें के निर्धारण के लिए और इस तरह के देरी के परिणामों से संबंधित क्षेत्र में आया जिसमें आरोपी को आरोपमुक्त या दोषमुक्त कर दिया गया। उन सभी में विवाद को समाप्त करने की आवश्यकता थी तद्वानुसार मामले को रामचन्द्र राव बनाम कर्नाटक राज्य (7) मामले में 7 न्यायाधीशों की पीठ के पास भेजा गया था और बहुमत की राय से ए.आर. अंतुले और करतार सिंह के फैसले का विश्लेषण करते हुए बडी पीठ को भेजा गया था, विधायिका की शक्ति और और न्यायालय की शक्तियों के क्षेत्राधिकार के स्पेक्ट्रम से संबंधित अन्य कानूनी सिद्धांतों में कुछ निष्कर्ष संख्या 3 और 4 जो वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक है निम्न प्रकार है-

> ''3. ए.आर. अंतुले मामले में निर्धारित दिशानिर्देश सम्पूर्ण नहीं है बल्कि केवल उदाहरणात्मक है, उनका उद्देय सख्त नियमों के रूप में काम करना या स्टरेट जैकेट फॉरमुले की तरह लागु करना नहीं है। उनकी प्रायोजिता प्रत्येक मामले के तथ्यात्मक स्थिति पर निर्भर करेगी। सभी स्थितियों का

पूर्वाभास करना कठीन है और कोई सामान्यकरण नहीं किया जा सकता है।

4. सभी आपराधिक कार्यवाहीयों के लिए कोई बाहरी सीमा निर्धारित करना न तो उचित है और न ही व्यवहार्य है और न ही न्यायिक रूप से स्वीकार्य है। कॉमन कॉज (I), राज देव शर्मा (I) और राज देव शर्मा (II) में बनाई कई दिशाओं में निर्धारित समय सीमाएं या सीमाएं इतनी निर्धारित या खींची नहीं जा सकती थी। समय सीमा अथवा समय सीमा बाधित के संबंध में अनेक निर्देश जैसा कि कॉमन कॉज केस (ा), राज देव शर्मा और (ाा) में दिए गए निर्देशों द्वारा निर्धारित किया गया है, जो अच्छे कानून नहीं है। आपराधिक अदालतें केवल समय व्यतीत होने के आधार पर मुकदमें या आपराधिक कार्यवाही को समाप्त करने के लिए बाध्य नहीं है। जैसा की कॉमन कॉज केस, राजदेव शर्मा केस में निर्देश दिया गया था, अधिक से अधिक उन निर्णयों में निर्धारित समय की अवधि को मुकदमें या कार्यवाही में अदालतों द्वारा अनुस्मारक के रूप में कार्य करने के लिए लिया जा सकता है जब उन्हें अपने न्यायिक दिमाग को उनके सामने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों

पर लागू करने और निर्धारित करने के लिए प्रयोग में लिया जा सकता है। ए.आर. अंतुले मामले में बताए गए कई प्रासंगिक कारकों को ध्यान में रखते हुए यह विचार करे कि क्या मुकदमें या कार्यवाही में इतनी देरी हो गई है कि इसे दमनकारी और अनुचित कहा सकता है। इस तरह की समय सीमा को किसी भी न्यायालय द्वारा मुकदमें या कार्यवाही को आगे जारी रखने में बाधा के रूप में नहीं माना जा सकता है और न ही इसे अदालत को इसे समाप्त करने और आरोपी को बरी करने या आरोपमुक्त करने के लिए अनिवार्य रूप से बाध्य किया जाएगा।''

16. इस समय हम यह प्रकट करने के लिए कुछ निर्णय देख सकते है कि कैसे अब्दुल रहमान अंतुले और पी. रामचन्द्र राव में प्रतिपादित सिद्धांतों को इस न्यायालय द्वारा अभियोजन को रद्द करने और इसके संबंध में की गई प्रार्थना अस्वीकार करने के उदेश्य से लागु किया गया है। वकील प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य (8) में दो न्यायाधीशों के खण्डपीठ ने तथ्यात्मक परिदृश्य पर ध्यान दिया कि प्रकरण की अनुसंधान एक ऐसे अधिकारी द्वारा की गई थी जिसके पास जांच करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। उक्त न्यायिक सिद्धांत अभियुक्त ध् अपीलकर्ता पर मुकदमें में देरी करने का आरोप नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि उसने

विधि विरूद्ध अनुसंधान को चुनौती देने के अपने अधिकार का सफलतापूर्वक प्रयोग किया था। दिनांक 07.09.1990 को 3 महिने की अवधि के भीतर अनुसंधान पूरा करने के उच्च न्यायालय के निर्देश के बावजूद दिनांक 27.02.2007 तक अनुसंधान पूरा नहीं हुआ। प्रकरण में आरोप पत्र दिनांक 01.05.2007 को प्रस्तुत किया गया और तदानुसार यह राय दी गई कि यह ऐसा कोई मामला नहीं जहां कोई असाधारण परिस्थिति थी जिसे संभवतः जांच में दो दशकों से अधिक की अत्यधिक देरी को माफ करने के लिए विचार किया जा सकता था। तद्ानुसार विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही को रद्द किया गया।

17. सुर्दशनाचार्य बनाम पुरूषोत्तमाचार्य और अन्य (9) के मामले में गबन और आपराधिक न्यासभंग के अपराध के लिए आपराधिक मुकदमा चलाया गया था। मुकदमें की कार्यवाही को रद्द करने के लिए प्रस्तुत प्रार्थना पत्र पर उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए मुकदमें की कार्यवाही को रद्द करने से इनकार कर दिया कि आरोपी ने आपराधिक प्रकरण के विचारण में विचारण की कार्यवाही को विलंबित करने में अपनी भूमिका निभाई थी और न्यायालय ने निर्देश दिया कि मामले की सुनवाई दिन प्रतिदिन की जाये। प्रकरण इस न्यायालय में पहुंचा और यह तर्क दिया गया कि लंबे समय के अंतराल के बाद आरोपी ध् अपीलकर्ता को मुकदमें की पीड़ा में डालना अनुचित होगा। डिविजन बैंच ने पी. रामचन्द्र

राव में निर्धारित सिद्धांतों का उल्लेख किया और आरोपी के आचरण पर ध्यान देते हुए कार्यवाही को रद्द करने से इनकार कर दिया।

18. इस स्तर पर, हम दूसरे पहलु पर ध्यान दिलाना उचित समझते है जिसे न्यायालय के समक्ष कभी कभी उजागर किया जाता है। यह काफी सामान्य बात है कि कुछ मामलों में यह तर्क दिया जाता है कि जबतक शीघ्रता से सुनवाई नहीं होती है तब तक निष्पक्ष सुनवाई की अवधारणा पूरी तरह से व्यर्थ है। हाल ही में मोहम्मद हुसैन उर्फ जुल्फीकार अली बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार राज्य (10) के प्रकरणो में तीन न्यायाधीशों की पीठ ने पी. रामचन्द्र राव, जहिरा हब्बीउल्लाह, एच. शेख और अन्य बनाम गुजरात राज्य (11) व सत्यजीत बनर्जी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (12) दोनों के बीच के सूक्ष्म अंतर को निम्नलिखित तौर पर बताया गया है।

"40. किसी अपराध के उत्तरदायी आरोपी व्यक्ति के लिए "शीघ्र सुनवाई" और "निष्पक्ष सुनवाई" संविधान के अनुच्छेद 21 का अभिन्न अंग है। हालांकि, शीघ्र सुनवाई का अधिकार और आरोपी की निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार के बीच गुणात्मक अंतर है। अभियुक्त की निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार के विपरित, त्वरित सुनवाई के अधिकार से वंचित होने से अभियुक्त को अपना बचाव करने में कोई पूर्वाग्रह नहीं होता है। त्वरित सुनवाई का अधिकार अपनी प्रकृति में सापेक्ष है। यह विविध परिस्थितियों

पर निर्भर करता है। आपराधिक मुकदमे के विचारण में देरी के प्रत्येक मामले को उस मामले के तथ्यो और परिस्थितियों में देखा जाना चाहिये। अभियोजन शुरू होने के बाद से कई साल बीत जाने मात्र से अभियोजन को बंद करने या अभियोग को खारिज करने का औचित्य नहीं हो सकता है। अभियुक्त के त्वरित मुकदमे के अधिकार से संबंधित कारको को समाज पर अपराध के प्रभाव और न्यायिक प्रणाली में लोगो के विश्वास के साथ तोला जाना चाहिये। शीघ्र सुनवाई आरोपी के अधिकारो को सुरक्षित करती है, परंतु यह सामाजिक न्याय के अधिकारो को बाधिक नहीं करती है। अपराध की प्रकृति और गंभीरता, इसमें शामिल व्यक्तियों, सामाजिक प्रभाव और सामाजिक जरूरतो को अभियुक्त के शीघ्र सुनवाई के अधिकार के साथ तोला जाना चाहिये। यदि संतुलन दूसरी ओर झुकता है, तो आपराधिक मुकदमे के निस्तारण में लंबी देरी के खिलाफ काम नहीं करना चाहिये। यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और स्थितियो के परिप्रेक्ष्य में अभियुक्त का अधिकार अगर अभियुक्त की ओर संतुलन बनाता है, तो अभियोजन को समाप्त किया जा सकता है।"

19. यह कि एक ओर त्वरित सुनवाई का अभियुक्त को अधिकार है एवं दूसरी ओर प्रकरण को रद्द करने या दोषमुक्त करने या प्रकरण की पुनः सुनवाई के लिए भेजने से इनकार करने का अधिकार इस न्यायालय के पास है। इसके अतिरिक्त समाज पर अपराध पर प्रभाव और

न्यायिक प्रणाली में लोगो के विश्वास के संबंध में होने का संबंध है। इस प्रकार के मामलों में कोई यांत्रिक दृष्टिकोण नहीं हो सकता एवं आपराधिक विचारण को तय करने के लिए कोई निश्चित समय सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। आपराधिक विचारण में विलंब को तथ्यात्मक रूप से देखा जाना चाहिए। अपराध की प्रकृति, सामाजिक न्याय की अवधारणा और सामूहिकता की पूकार को ध्यान में रखना चाहिए। हस्तगत प्रकरण में अभियुक्त के विरूद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के तहत आय से अधिक सम्पत्ति अर्जित करने के अपराध में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया था। इस अधिनियम का उद्देश्य सेवा करना है संसद के द्वारा भ्रष्टाचार को मिटाना और भ्रष्टाचार के आपराधिक अपराधी को दोषी साबित होने पर कठोर सजा प्रदान करने के उद्देश्य से इस अधिनियम का निर्माण किया गया था। इस अधिनियम को बनाने के विधायिका का उद्देश्य सामाजिक प्रासंगिकता है। वर्तमान परिदृश्य में भ्रष्टाचार का निवारण अर्थव्यवस्था की नींव को मजबूत करने की क्षमता के रूप में देखा गया है। कई प्रकार के प्रकरणों में राशि बहुत कम होती है और कई प्रकरणों में राशि बहुत ज्यादा होती है।

इस प्रकार के प्रकरणों में अपराध की गंभीरता का आंकलन रिश्वत की राशि की मात्रा के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए। किसी लाभ के बदले लाभ देने के लिए अधिकारिक रूप से लोकसेवक के पद का दुरूपयोग करने

का कार्य सामूहिकता के खिलाफ अपराध है और लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों के लिए अभिशाप है, क्योंकि इस प्रकार का अपराध आमजन के विश्वास को कानून के प्रति कमजोर करता है और इस प्रकार का अपराध कानून के शासन में एक विसंगति पैदा करता है। सुशासन के व्यवस्था लोक संस्थाओं पर जनता के विश्वास पर आधारित होता है। भ्रष्टाचार के मामलों में प्रासंगिक सबुतों की जांच किये बिना केवल आपराधिक प्रकरण के विचारण में हुए विलंब के आधार पर प्रकरण की कार्यवाही को निरस्त किया जाकर भ्रष्टाचार को जारी रखने की अनुमति दी जाती है तो एक समय ऐसा आ सकता है जब भ्रष्टाचारी व्यक्ति अराजकता का मार्ग प्रशस्त करने की प्रवृति को बढावा देंगे।

20. बिना किसी विरोधाभास के डर के यह कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार को डीग्री से नहीं हांका जाना चाहिए क्योंकि भ्रष्टाचार अव्यवस्था की जननी है, प्रगति के लिए सामाजिक ईच्छा को भ्रष्टाचार खत्म कर देता है, अवांछित महत्वकांक्षाओ को उत्पन्न करता है, विवेक को समाप्त कर देता है इसके अतिरिक्त किसी भी लोक संस्थान की महिमा को भी नष्ट कर देता है तथा आर्थिक संरचना को कमजोर बना देता है। भ्रष्टाचार किसी भी देश की सभ्यता की भावना को क्षत विक्षत कर देता है और वहां के शासन व्यवस्था को नष्ट कर देता है। अनैतिक रूप से अर्जित की गयी धन सम्पत्ति ईमानदारी में विश्वास करने वाले लोगों की उर्जा को नष्ट कर देती

है, इतिहास पीड़ा के साथ दर्ज करता है कि अनैतिक धन सम्पत्ति से अर्जित आय से लोगों को कैसे कैसे कष्ट सहने पड़ते है, एकमात्र राहत देने वाला तथ्य यह है कि क्या इस प्रकार के मामलों में सामूहिक संवेदनशीलता इस तरह की पीड़ा का सम्मान करती है, क्या यह संवैधानिक नैतिकता के अनुरूप है, इसलिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 के तहत कार्यवाही रद्द करने के लिए उपरोक्त पृष्टभूमि में विचार किया जाना चाहिए।

21. यह कि ऐसा प्रतीत होता है जो विंलब हुआ है वो अभियुक्त के द्वारा प्रयोग में ली गई टालने की रणनीति के तहत हुआ है, अभियोजन के द्वारा ढीले रवैये और सिस्टम की कमियों के कारण जैसे न्यायालय को खाली रखा जाना, जबकि विचारण न्यायालय के समक्ष किसी भी प्रकार का स्थगन आदेश प्रकरण में नहीं था फिर भी आरोपी के कहने पर स्थगन दिया गया। उच्च न्यायालय के द्वारा स्थिति स्पष्ट करने के पश्चात् अभियुक्त के द्वारा अंतर्निहित प्रवृत्ति के द्वारा स्थगन पाया गया और प्रकरण में विविध प्रार्थना पत्रों को प्रकरण के विचारण के दौरान प्रस्तुत कर विचारण लंबा खींचने का प्रयास किया गया। यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्त कानून में सुनवाई का अभियुक्त को अधिकार है एवं दूसरी ओर प्रकरण को रद्द करने या दोषमुक्त करने या प्रकरण की पुनः सुनवाई के लिए भेजने से निहित अधिकारों की माध्यम से प्रार्थना पत्र प्रस्तुत नहीं कर सकता परंतु

प्रकरण का विचारण अभियुक्त के द्वारा प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर विलंबित हुआ है, तो अभियुक्त के द्वारा इस बात के लिए अपनी समर्थन में यह आधार नहीं ले सकता कि प्रकरण में विलंब के आधार पर उसे राहत प्रदान करते हुए प्रकरण की कार्यवाही को खत्म करने के संबंध में रियायत की अपेक्षा करे। वर्तमान मामले में अभियुक्त पर आरोप है कि अभियुक्त के द्वारा 33.44 लाख रूपये की सम्पत्ति अर्जित की गई। अभियोजन कार्यवाही शुरू करते समय उक्त राशि की के मूल्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अधिकारिक पद का दुरूपयोग करने की प्रकृति एक महामारी की तरह फैल गई है और इस प्रकृति ने सामूहिक रूप से यह विश्वास दिला दिया है कि जब तक रिश्वत नहीं दी जायेगी, काम नही होगा। कुछ लोग इसका विरोध करते है परंतु यह विरोध दूसरों को साहस की और साहस के पवित्रता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता है। कुछ लोग इसे भटकाने की कोशिश करते है। यह प्रचलन सामाजिक एवं राष्ट्रीय हित के विरूद है। इस प्रकार से आरोपी के खिलाफ कार्यवाही जारी रखने का संतुलन अभियोजन पक्ष के पक्ष में झुकता है और इसलिए यह न्यायालय प्रकरण की कार्यवाही को रद्द करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए ईच्छुक नहीं हैं। हालांकि, विशेष न्यायाधीश को दिसम्बर 2013 के अंत तक विचारण के निपटान करने का निर्देश दिया जाता है।

22. रिट याचिका को निस्तारित किया जाता है।

बी.बी.बी.

रिट याचिका निस्तारित की गई।

(1) (1998) 7 एस.सी.सी. 507

(2) (1992) 1 एस.सी.सी. 225

(3) (1994) 3 एस.सी.सी. 569

(4) (1996) 4 एस.सी.सी. 33

(5) (1996) 6 एस.सी.सी. 775

(6) (1999) 7 एस.सी.सी. 604

(7) (2002) 4 एस.सी.सी. 578

(8) (2009) 3 एस.सी.सी. 355

(9) (2012) 9 एस.सी.सी. 241

(10) (2012) 9 एस.सी.सी. 408

(11) (2004) 4 एस.सी.सी. 158

(12) (2005) 1 एस.सी.सी. 115

यह अनुवाद आर्टिफिश्यल इंटेलिजेंस टूल ''सुवास'' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्री राम अवतार सोनी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण- इस निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।